

भारतीय लोकतन्त्र की बदलती प्रकृति में महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण

डॉ. सत्येन्द्र सिंह^{1*}, डॉ. विपिन कुमार²

¹ एसो. प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जनता वैदिक कॉलेज, बड़ौत (बागपत)

ई-मेल satyendra.jvc@gmail.com

² समाजशास्त्र विभाग, कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बिलासपुर, गौतमबुद्धनगर

सार - भारतीय लोकतन्त्र की बदलती हुई में महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण होना एक बहुत ही महत्वपूर्ण चुनौती है। लम्बे समय तक औरतों को राजनीतिक जीवन आधार पर वंचित रखा गया, क्योंकि सोच यह थी कि राजनीतिक गतिविधिया पुरुषों के एकाधिकार की व्यवस्था है। भारत में वर्तमान समय में भी पुरुष प्रधान प्माज 0या1त है, जिसके चलते महिलाओं की स्थिति दयनीय है और यदि भारत में नवीनता लानी है तो उपे महिलाओं के संबंध में उचित व्यवस्था का मार्ग बशस्त करना होगा, क्योंकि कई स्थानों पर अलग-अलग स्वीकार्य विधियों के कारण महिलाओं के पथ उचित न्याय नहीं हो पाता है।

-----X-----

परिचय

भारत इस अर्थ में लोकतंत्र है कि भारतीय संविधान ने सभी नागरिकों को जाति, वर्ण, धर्म और लिंग में विभेद किए बिना सभी को समानता, स्वतंत्रता और सभी के लिए न्याय सुनिश्चित किया है। एक अहम मुद्दा महिलाओं को सामाजिक और आर्थिक रूप से राजनीतिक सशक्तिकरण के माध्यम से मुक्ति देनी है। औरतों का राजनीतिक सशक्तिकरण पंचायतों में आरक्षण के माध्यम से आया है और समावेशी लोकतंत्र की सबसे बड़ी मिसाल है, जिसमें लोक संस्थाओं को महिलाओं के प्रति संवेदनशील बनाया गया है। अगर भारत को समावेशी लोकतंत्र बनना है, तो राजनीतिक सशक्तिकरण बेहद विश्वसनीय मांडल है, जिसके माध्यम से न सिर्फ औरतों को प्रतिनिधित्व मिलता है, बल्कि इस कम प्रतिनिधित्व वाले और वंचित तबके को भारतीय समाज में प्रशासनिक प्रतिनिधित्व भी मिलता है। पिछले बीस सालों में समावेशी लोकतंत्र की दिशा में काफी प्रगति देखी गई है और सार्वजनिक जीवन से महिलाओं को संतुलित और समान प्रतिनिधित्व मिला है। बावजूद इसके भारतीय समाज में अब तक लिंग भेद का प्रभाव मौजूद है और औरतों को राजनीतिक गतिविधियों में शामिल करने के लिए अभी भी कुछ काम किए जाने बाकी हैं।

समावेशी लोकतंत्र तभी काम आता है, जब समाज के सभी वर्गों के लोगों को प्रशासन में भागीदारी, निर्णय लेने और सामाजिक-राजनीति के प्रति जवाबदेह देने हेतु सशक्त किया जाए। लोकतंत्र की इस तरह की दृष्टि हाशिये के लोगों और आम आदमी के सशक्तिकरण से आती है। स्थानीय स्वशासन ही भारतीय लोकतंत्र को सही तरीके से महसूस करने और इसकी समावेशी प्रकृति और आचरण के अनुरूप एक कुंजी है।

समावेशी शब्द का सही अर्थ है समाज के सभी स्तरों पर सभी नागरिकों की प्रत्यक्ष सहभागिता। इसके विपरीत भारत में हम व्यापक तुष्टिकरण की नीति की ओर भटक गए हैं। समावेशी लोकतंत्र का अर्थ होता है सरकारी रियायतों वाले कुछ सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम।

समावेशी की अवधारणा बहुत सारे स्तरों पर काम करती है जो बड़ी बारीकी से एक-दूसरे से गुंथे होते हैं। यदि समाज के कई वर्ग सामाजिक भेदभाव के शिकार होते हैं तो आर्थिक समावेशन नहीं हो सकता। इसी प्रकार, समावेशी, लोकतंत्र यह मानकर चलता है कि विभिन्न सामाजिक और आर्थिक समूह अपने मत एवं रीति-रिवाजों का निर्भय होकर पालन करने को स्वतंत्र है। इस सबके लिए लोकतंत्र की ऐसी संरचना की आवश्यकता होती है। जिसमें स्वतंत्रता, धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक न्याय के

मूल्यों को संस्थागत रूप मिला हो। यह स्पष्ट है कि समावेशन, राज्य और समाज की वंचित वर्ग के सशक्तिकरण और उनके सम्बन्धों को गैर-श्रेणीबद्ध और समान रूप से पुनर्गठित करने के मकसद से शक्ति संरचना में मौलिक परिवर्तन पर आधारित है।

समकालीन सन्दर्भ में समावेशी समाज का अर्थ स्वतंत्र और समान व्यक्तियों के समूह से है। समावेश स्वयं में मुद्दा नहीं बल्कि मुद्दा स्वेच्छा से निष्पक्ष और समान शर्तों पर समावेश का है। यह भी कहा जा सकता है कि समावेश कला का वह शब्द है जिसकी अंगीभूत विशेषता स्वतंत्रता और समानता है तथा शान्ति इसकी पूर्व आवश्यक शर्त है। उद्धार करने वाले समकालीन आन्दोलनों का मकसद लोगों को राजनीतिक सामाजिक और सांस्कृतिक वर्गों के अनुसार पायदान पर रखना नहीं है। इनका उद्देश्य लोगों को दमनकरी व्यवस्था के तहत लाना भी नहीं है। उद्धार करने वाले समकालीन आन्दोलन इस मान्यता से प्रेरित है कि सभी के लिए स्वतन्त्रता और समानता में वृद्धि समावेश के जरिये ही की जा सकती है।

समावेशी लोकतंत्र को पूरी तरह से हासिल करने के लिए अभी भी काफी कुछ किया जाना शेष है। जब तक समाज के सभी शोषित, पीड़ित वंचित तबके के लोग सामाजिक विकास और उसके उत्पादन के साधनों में हिस्सेदारी प्राप्त करके, सम्मानपूर्वक सुरक्षित जीवन नहीं जीने लग जाते, तब तक समावेशी लोकतंत्र का प्रश्न आदर्शवाद की भूल-भुलैया में भटकता रहेगा।

समावेशी लोकतंत्र का एक सशक्त स्तम्भ देश के युवा हैं। युवा भारत का समावेशी सतत् समावेशी विकास के साथ आगे बढ़ सकता है और भारत दुनिया के सशक्त देशों की कतार में खड़ा हो सकता है।

भारत में सन् 1993 का 73वां संविधान संशोधन विधेयक लोकतंत्र का लक्ष्य हासिल करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम साबित हुआ है।

73वें संविधान संशोधन विधेयक ने एक तरह से संस्थागत बदलाव की तस्वीर पेश की है जिसके माध्यम से जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक प्रक्रिया में महिलाओं की समान पहुँच और भागीदारी सुनिश्चित की जा सकी है। इस संशोधन ने हाशिये की ग्रामीण महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण करने में बड़ी भूमिका अदा की है, जो पहले स्थानीय स्तर पर अपनी क्षमताओं से पूरी तरह अनभिज्ञ थी। पहले पुरुष एकाधिकार वाला ग्रामीण शक्ति संगठन इन राजनीतिक संस्थाओं में अपनी पारम्परिक पकड़ आसानी से ढीली नहीं होने देना चाहता था। महिलाओं के

राजनीतिक सशक्तिकरण से समावेशी लोकतंत्र का लक्ष्य हासिल करने में खासी मदद मिली है।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राष्ट्रवादी आन्दोलनों के गाँधीवादी दौर में महिलाएँ बड़ी संख्या में घर की चारदीवारी से बाहर निकली थी और स्वतन्त्रता की लड़ाई में उन्होंने अहम् एवं सक्रिय भूमिका निभाई थी। आज महिलाएँ हर क्षेत्र में पुरुष के साथ कदम से कदम मिलाकर अपनी अंतर्निहित क्षमता के बल पर आत्मविश्वास और सहज के साथ पुरुष प्रधान समाज में अपने अस्तित्व का अहसास करवाने का सफल प्रयास कर रही हैं।

देश में यत्र-तत्र ऐसे कई उदाहरण बिखरे पड़े हैं, जिसमें हाशिये पर पड़ी और वंचित महिलाओं ने समावेशी लोकतंत्र की शक्तियों के बूते समाज में अधिकार हासिल किया और जिम्मेदारियों का बखूबी निर्वाह कर रही है। इसका एक उदाहरण बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के काटी प्रखंड की दामोदरपुर ग्राम पंचायत की मुखिया अफसाना परवीन है। सन् 2010 में दामोदरपुर ग्राम पंचायत से पहली बार चुनी गई अफसाना परवीन स्वीकार करती हैं कि जैसे-जैसे महिलाओं की पंचायतों में भागीदारी बढ़ी है, वैसे-वैसे महिलाओं की महत्ता, बाल-विकास, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे मुद्दे केन्द्रीय मुद्दे बन गए हैं। माध्यमिक शिक्षा प्राप्त अफसाना परवीन मानती हैं कि 73वें संविधान संशोधन विधेयक के तहत पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को दिया गया आरक्षण अपने लक्ष्य में सफल रहा है। एक समय था जब महिलाएँ दरवाजे के पीछे पर्दे की ओर से अपनी बात कह पाती थी, लेकिन अब वे दायित्व और अधिकार के साथ बैठती हैं। विद्यालयों का निरीक्षण करने जाती हैं। केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित विकास कार्य जैसे मनरेगा के कार्यों की देखरेख करती हैं। घर का काम करते हुए महिलाएँ अब समाज विकास की परियोजना बैठकों में भाग लेती हैं और न सिर्फ महिलाएँ, बल्कि पुरुषों की समस्याएँ भी सुनती हैं।

महिला प्रतिनिधियों को अपनी जिम्मेदारियों और कर्तव्यों का निर्वाह करने में खासी मुश्किल पेश आती है। यह पंचायती राज संस्थाओं में प्रभावी भागीदारी की दिशा में एक किस्म की बाधा ही है। ये बाधाएँ अशिक्षा, परिजनों का असहयोगी व्यवहार, नौकरशाही, समुदाय और अपने काम के प्रति उपेक्षा के रूप में सामने आती हैं।

पंचायत समिति और ग्राम पंचायत में अन्य कई ऐसी महिला प्रतिनिधि भी हैं, जिन्होंने पर्दा की वजह से अपनी समस्याएँ बताने में हिचकिचाहट दिखाई। इनमें से कोई अपने पति के एवज में काम करती है और यह एक किस्म की हदम भागीदारी

ही है। ऐसे उदाहरण समावेशी लोकतंत्र की राह में बाधा पैदा करते हैं। पंचायती राज संस्थाओं का उद्देश्य ही इसकी लोकतांत्रिक प्रवृत्ति है और इन संस्थाओं की मजबूती ही इसका प्रमुख उद्देश्य है, ताकि जन की व्यापक भागीदारी की बदौलत लोकतंत्र की इन संस्थाओं को दृष्टि और स्थायित्व मिल सके।

हिन्दू, पठान, सिक्ख तथा अंग्रेज एक के बाद एक इस देश के शासक बने, परन्तु ग्राम संस्थाओं में कोई अन्तर नहीं आया। भारतीय ग्रामों की यह इकाइयाँ ही वास्तव में उन्हें उन परिवर्तनों तथा संक्रमणों से बचा सकी है जो समय-समय पर यहाँ आते रहे हैं। देश में सुख, शांति, स्मृद्धि और स्वतन्त्रता का अधिकार श्रेय इन्हीं ग्राम सभाओं को है। ग्राम सभाओं की जीवन शैली को संवाद, सहमति, सहयोग और सहभागिता जैसे तत्वों से चिन्हित किया जाए तो लोकतांत्रिक जीवन का उच्चतम आदर्श बड़ी आसानी के साथ निरूपित किया जा सकता है।

गाँधी जी का मानना था कि आजादी की शुरुआत निचले स्तर से होनी चाहिए। गाँधी जी कहते थे कि मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूँगा, जिसमें गरीब से गरीब आदमी भी यह महसूस करे कि यह उसका देश है, जिसके निर्माण में उसकी आवाज का महत्व है उसमें स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार मिलेंगे। सारी दुनिया से हमारा संबंध शांति और भाईचारे का होगा। यही है मेरे सपनों का भारत। लेकिन क्या हम आजादी के बाद गाँधी जी के सपनों को पूरा करने में सफल रहे हैं? राष्ट्रीय स्तर पर गरीबों, ग्रामीण क्षेत्रों या आधी दुनिया की सापेक्ष वंचना देखी जा सकती है। महिलाओं को मुख्यधारा में लाना बहुत जरूरी है और उनके समुचित अधिकारों की पहचान सुनिश्चित करना भी अभी बाकी है।

आजादी के चौथे दशक तक महिलाएँ हाशिये पर रही हैं। हमारी राजनीतिक प्रणाली में उनको वोट देने का अधिकार तो है, परन्तु राजनीतिक प्रशासन में उनकी भूमिका मात्र की है। लोकतन्त्र की नर्सरी कहे जाने वाले ग्रामसभा में महिलाओं की भूमिका को प्रारम्भ से ही संदेह की दृष्टि से देखा गया। प्रारम्भ में पुरुष दासता मानसिकता और महिलाओं में व्याप्त निरक्षरता के कारण पंचायतीराज व्यवस्था मजबूत न हो सकी, लेकिन 1992 में 73वां व 74वां संविधान संशोधन द्वारा पंचायतीराज में महिलाओं का प्रतिनिधित्व एक तिहाई किया जाना गाँधी जी के सपनों को पूरा करने में एक क्रान्तिकारी कदम था। संविधान सामाजिक क्रांति की अपेक्षा रखता है और यह क्रान्ति निर्दिष्ट सामाजिक परिवर्तन में एक साधन के रूप में विधि के प्रयोग के माध्यम से ही लाई जा सकती है। स्त्रियों के लिए समानता की प्राप्ति तक ऐसा विशिष्ट उद्देश्य है, जो उदेशिका, मूल अधिकारों तथा राज्य के निदेशक सिद्धांतों से उपलक्षित होता है। इन संवैधानिक उपबंधों के प्रभाव

और तदनुसार की गई विधिक तथा प्रशासनिक कार्यवाहियों के मूल्यांकन के लिए हमें ऐसी जटिल सामाजिक प्रक्रियाओं की जाँच करनी पड़ी, जिनमें विभिन्न समूहों के चर सम्मिलित थे, जैसे (1) आर्थिक और सामाजिक असमानता के अपने बुनियादी ढाँचे सहित भारतीय समाज का पंचमेल स्वरूप, (2) समुदाय और वर्ग पर आधारित परम्परागत सामाजिक, संरचना में अंतर्निहित समानांतर तथा स्त्रियों की ये प्रत्याशित भूमिकाएँ जिनका उनकी स्थिति पर अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है तथा (3) सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन की दिशाएं और उनका स्त्रियों की स्थिति पर प्रभाव।

गाँधी जी ने ग्रामसभा के गठन में पुरुष और महिलाओं के निर्वाचन का तरीका अपनाया। उनका मानना था कि ग्रामसभा का मुख्य कार्य ग्रामों को आत्मनिर्भर बनाना और सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए अपने कार्यों के प्रति निष्ठावान होना जरूरी है। इस कार्य हेतु महिलाओं को सबसे आगे रखा गया, क्योंकि महिलाएं परिवार की जरूरतों को पुरुषों की अपेक्षा ज्यादा समझती हैं। हालांकि प्रारम्भ में महिलाएँ ग्राम सभा का सक्रिय अंग बनने में झिझकती थी। उनकी यह हीनभावना उनके कदमों को पुनः घर की ओर मोड़ देती थी। 73वें और 74वें संशोधन का मुख्य लक्ष्य ग्रामीण महिलाएँ थी, क्योंकि भारत की महिलाओं की 80 प्रतिशत आबादी गाँवों में ही है और ग्राम सभाओं में उनका सहभागी होना उनके आत्मसम्मान का पहला चरण है।

महिलाओं में यह जाग्रति लानी होगी कि ग्रामसभा के विकास कार्यों को बढ़ाने में यह सक्षम है व निरक्षरता रूपी बाधा को दूर किया जा सकता है। ग्रामसभा के लिए चुनी गई महिलाएँ एक तरफ अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को सुलझाती हैं, वहीं दूसरी ओर ग्रामसभा में सौहार्दपूर्ण माहौल बनाए रखने का काम करती हैं। ग्रामसभा महिलाओं की सफलताओं को निम्न बिन्दुओं में देखा गया है-

- विकास कार्यों को नियोजित तरीके से पूर्ण करना।
- विकास कार्यों में प्रत्येक वर्ग की भागीदारी को अनिवार्य और सुनिश्चित बनाना।
- कृषि विकास के साथ-साथ सामाजिक विकास और शिक्षा को प्रोत्साहित करना।
- वृक्षारोपण।

- सरकार द्वारा चलाए जा रहे विकास कार्यक्रमों एवं नीतियों का लाभ तथा अन्य कार्यक्रमों की जानकारी महिलाओं को उपलब्ध कराना।
- सरकार को इस बात के लिए मजबूर करना कि टाल-मटोल की बजाय दृढ़ निश्चय, आत्मविश्वास एवं ईमानदारी के साथ विकास के लिए कार्य करना।
- सम्पर्क मार्ग का निर्माण।

लोकतंत्र की भावना कोई यांत्रिक वस्तु नहीं है जिसका विकास रूपों का अंत करने से हो जाए। उसके लिए हृदय परिवर्तन आवश्यक होता है।

अगर देश समावेशी लोकतंत्र को सही अर्थों में लागू करना चाहता है, तो समाज के विभिन्न तबकों की महिलाओं का सशक्तिकरण ही सही विकल्प है। हालाँकि महिलाओं को पुरुषों की तरह वोट का अधिकार है और उन्हें गाँव से लेकर संसद तक चुनाव लड़ने के अधिकार भी हासिल हैं। बावजूद इसके उनका पूरी तरह सशक्तिकरण होना अभी बाकी है।

समावेशी लोकतंत्र की अवधारण किसी लोकतांत्रिक प्रक्रिया में सभी की भागीदारी सुनिश्चित करती है और तय करती है कि इस प्रक्रिया में कोई छूट न जाए। यह प्रक्रिया हमें उन रास्तों की समीक्षा करने और उन्हें इस दृष्टि से ढालने का अवसर देती है, जिसमें हाशिये के लोग, खासकर महिलाओं को राजनीतिक प्रक्रिया में बराबर का भागीदार बनाए जाने की भावना निहित है। इसके अलावा समावेशी लोकतंत्र में हमें छद्म भागीदारियों को भी हटाना होगा जिसके तहत महिलाएँ पुरुषों के एवज में रबड़-स्टाम्प की तरह काम करती हैं। यह समय की माँग है कि हम समावेशी लोकतंत्र के लिए पिछड़े समाज के लिए अवसर पैदा करने हेतु साथ आये।

समावेशी लोकतंत्र प्रत्यक्ष राजनीतिक लोकतंत्र की परियोजना, सामाजिक संगठन का एक प्रकार है, जो समाज को आर्थिक, राजनीतिक और प्राकृतिक तरीके से फिर से पुनर्समन्वित करती है। यह प्रक्रिया दो ऐतिहासिक परम्पराओं से निकली है, एक विशुद्ध लोकतांत्रिक प्रक्रिया और दूसरी समाजवादी प्रक्रिया। इसके तहत प्रत्यक्ष रूप से लोकतंत्र और मानव अधिकारों के बीच एक अंतर्संबंध देखा जाता है, जो महज सामान्य अधिकारों से बड़ा है। सम्पन्न लोगों और वंचितों के बीच की खाई को पाटने का उद्देश्य एक समावेशी माँडल की माँग करता है। यह सिर्फ कानून का अधिकार दे देने और महिलाओं को समानता के स्तर पर ला देने से ही नहीं होगा बल्कि महिलाओं को उपयुक्त और समुचित सक्षमता की ताकत भी देनी होगी, ताकि सामाजिक और

राजनीतिक मंच पर वे अपनी आवाज मजबूती से उठा सके। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मजबूत लोकतंत्र वही है, जिसमें समाज के विभिन्न वर्गों के बीच असमानता सामाजिक तनाव और क्रोध की कोई गुंजाइश न रहे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गोपाल दत्त शर्मा लक्ष्मी सिंह वर्मा, "डेमोक्रेसी, आर.टी.आई. एण्ड गुड गवर्नमेंस इन इण्डिया-चैलेन्जस एण्ड ऐसपोन्सिस", अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 2011
2. रमेश छाजता, "डेमोक्रेटिक पॉलिसिंग: एन एसेन्स ऑफ गुड गवर्नमेंस", 2011
3. वी.पी. श्रीवास्तव, "ह्यूमन राइट्स एण्ड ज्यूडिसरी", मानस पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2002
4. एम.पी. टण्डन और डॉ. वी.के. आनन्द, "इण्टरनेशनल लॉ एण्ड ह्यूमन राइट्स", पब्लिशड वाय इलाहाबाद लॉ एजेन्सी, 2005
5. सनत राहा, "प्रॉब्लम ऑफ इण्डियन डेमोक्रेसी एण्ड एमरजेंसी", (मैनस्ट्रीम, एनुअल नम्बर 1975)
6. रजनी कोठारी, "डेमोक्रेटिक पॉलिटि एण्ड सोशल चैप इन इण्डिया", एलाइड पब्लिशर्स लिमिटेड, 1976
7. एन, श्रीनिवासन, "डेमोक्रेटिक गवर्नमेन्ट इन इण्डिया", 1978
8. के. संथानम, "डेमोक्रेटिक प्लानिंग, प्रॉब्लम एण्ड पिटफाल्स", 1978
9. के.वी.राव, "पार्लियामेंटी डेमोक्रेसीऑफ इण्डिया, ए क्रिटिकल कमेंट्री", कलकत्ता, 1961
10. पी.बी. मुखर्जी, "मूल अधिकार और संवैधानिक संशोधन", लोकतंत्र समीक्षा, वर्ष-4, अंक-94, अक्टूबर-दिसम्बर, 1972
11. योजना, "समोदशी लोकतंत्र", वर्ष-158, अंक: 8, अगस्त 2013

Corresponding Author

डॉ. सत्येन्द्र सिंह*

एसो. प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जनता वैदिक कॉलेज, बड़ौत (बागपत)